HIN3B18a_cours-09-2013-04-04-Krishna-baldev-vaid

कृष्ण बलदेव वैद (जन्म 27 जुलाई 1927) ने पंजाब विश्वविद्यालय से अंग्रेजी में एम.ए. किया और हार्वर्ड विश्वविद्यालय से पी-एच.डी. की डिग्री हासिल की। 1950 से 1966 दिल्ली और चंडीगढ में अंग्रेज़ी साहित्य का अध्यापन। 1966 से 1985 अमरीका में अंग्रेज़ी और अमरीकी साहित्य का अध्यापन। 1985 से 1988 भारत भवन, भोपाल में 'निराला सृजनपीठ' के अध्यक्ष भी रहे। कृष्ण बलदेव वैद अपने बेबाक उपन्यास 'विमल उर्फ़ जाएँ तो जाएँ कहाँ' के लिए जाने जाते हैं।

- कृष्ण बलदेव वैद हिन्दी के कथा-साहित्य में अपनी विरल उपस्थिति के कारण जाने जाते हैं।
- उनकी कहानियाँ और उनके उपन्यास पारंपरिक कथा-कृतियाँ जैसे नहीं हैं। वैद ने अपने 'फॉर्म' और 'कंटेंट' को लेकर लगातार नए प्रयोग किए हैं।
- उनकी इस प्रयोगवृत्ति के कारण उन्हें लेकर हिन्दी आलोचना में एक नासमझी का भी माहौल बना है।

► वैद का पहला उपन्यास 'उसका बचपन' (1957) हिन्दी साहित्य में एक नया प्रयोग था। इसमें एक निम्नमध्य वर्गीय परिवार के छोटे से बालक 'वीरू' के मानसिक विकास की कहानी है। लेखक ने एक बालक के मानसिक विकास में परिवेश का दबाव तथा इस दबाव के प्रति बालक की प्रतिक्रियाओं का बहुत ही सूक्ष्म चित्रण किया है।

► नर-नारी (1996) में लेखक ने 'अन्तरालाप शैली' में आज के शहरी अभिजातवर्गीय परिवारों की उन समस्याओं को उभारा है जो ख़ासतौर पर सेक्स को लेकर हैं। इस उपन्यास में नारी का आक्रोश, असंतोष और विद्रोह है। लेकिन यह विद्रोह व्यापक जीवन-संदर्भों के जटिल यथार्थ का सामना करते हुए कोई तार्किक विकल्प बन कर नहीं आ पाता।

► मायालोक (1999) में वैद 'अउपन्यास' या 'अनुपन्यास' (anti-roman) की रचना में लगे हैं। यहाँ कथावाचक 'मैं' कथा कहने के बजाय ऐसी स्वप्न-छायाओं में भटकता है जिनमें दमित सेक्स है, असुरक्षा है, भय है, वर्जनाएँ हैं, कुछ आत्मस्वीकृतियाँ हैं, किन्तु सकारात्मक कुछ नहीं। कथा-वाचक 'मैं' को कभी-कभी आज के जीवन-यथार्थ के कुरूप दृश्य भी दिखाई देते हैं, किन्तु उन पर व्यंग्य नपुंसक आक्रोश की अभिव्यक्ति बनकर रह गया है। कुल मिलाकर माया-लोक स्वप्न-खंडों का एक ऐसा नरक है, जिससे उबरने का कोई रास्ता नहीं है।

► एक नौकरानी की डायरी (2000) शहरों में मध्यवर्गीय परिवारों में चौका-बर्तन करने वाली एक युवा होती नौकरानी की डायरी है। नौकरानी थोड़ी पढ़ी-लिखी और संवेदनशील है। उसे वे सब लोग अच्छे लगते हैं, जो उससे ठीक तरह से बात करते हैं और उसे यह अहसास नहीं होने देते कि वह एक नौकरानी है। वह कई घरों में काम करती है। उसका अंतरंग परिचय कई तरह के लोगों के पारिवारिक जीवन और उनकी मानसिकता से है। साथ ही उसके सपनों की एक अलग दुनिया है, जहाँ ऊटपटाँग ख़्वाहिशें हैं, खतरनाक और खूबसूरत जानवर हैं, इंसान हैं, जिनके साथ वह खेलती है, नाचती है। डायरी में उसने दूसरों के मन की बातें अधिक कही हैं, अपने मन की कम। उपन्यास का अन्त नौकरानी के बीवी और अखबार वाले साहब के यहाँ काम छोड़ देने से होता है।

► गुज़रा हुआ जमाना (1980) में भारत-पाकिस्तान विभाजन से पहले पंजाब के एक कस्बे की किशोर दुनिया का सूक्ष्म अंकन किया गया है। ये किशोर बड़ों से दबे, पिसे हैं। त्रस्त हैं। वे किशोर सुलभ सपने देखते हैं, किन्तु बड़ों के दबाव में वे सपने बिखर जाते हैं। जवान होते ही वे विभाजन की त्रासदी देखते हैं। लेखक ने किशोर-दुनिया के यौन-प्रश्नों में अधिक दिलचस्पी दिखायी है।

► 'विमल उर्फ जायें तो जायें कहाँ' (1974) तथा 'काला कोलाज' (1989) में लेखक ने ऊब, भटकाव, बिखराव, कुण्ठा, नकार, कायरता, गलीज़पन का चित्रण किया है। ये दोनों उपन्यास ऐब्सर्ड उपन्यासों (यानी अउपन्यासों) की परंपरा में रखे जाते हैं। दरअसल 'कोलाज' पेंटिंग की दुनिया का शब्द है। इसका प्रयोग उस शैली के लिए किया जाता है, जिसका प्रयोग आधुनिक 'ऐंटी नावेलिस्ट्स' ने किया है। वैद जी निश्चित रूप से इन आधुनिक 'ऐंटी नावेल' की परंपरा से प्रभावित हैं।

► कृष्ण बलदेव वैद की कहानियों से गुजरना अपने आप में हिंदी कहानी की दूसरी परम्परा से गुजरना है जिसमें हिंदी कहानियों का एक ऐसा परिदृश्य दिखाई देता है जो हमें पठनीयता, किस्सागोई आदि के विपरीत एक ऐसे लेखन से रूबरू करवाता है जिसे प्रचलित मुहावरे में कहानी नहीं कहा जा सकता। लेखक का मकसद हमेशा यही रहता है कि प्रचलित के विपरीत एक ऐसे कथा-मुहावरे को प्रस्तुत किया जा सके जिसमें गहरी बौद्धिकता भी हो और लोकप्रियता का निषेध भी। कृष्ण बलदेव वैद की कहानियों को पढ़ते हुए ऐसा महसूस होता है कि हिंदी कहानियों में सचमुच विविधता है।